लंकाधिपति रावण एक विमर्श–रामायण के परिप्रेक्ष्य में

शिवपूजन चौरसिया*

लंकाधिपति रावण वाल्मीकीय रामायण में प्रतिनायक के रूप में एक विशिष्ट पात्र है। वह अत्यन्त बुद्धिमान्, महापण्डित, विविध शास्त्रों का ज्ञाता, तेजस्वी, पराक्रमी, रूपवान, विद्वान् एवं भगवान् शंकर का बहुत बड़ा भक्त है। रावण के शासन काल में लंका का वैभव अपने चरम पर है, इसीलिए उसके नगर को 'सोने की लंका' या स्वर्णमयीलंका कहा जाता है। लंकाधिपति रावण को उसकी अच्छाइयों के लिये नहीं बल्कि उसकी बुराइयों के लिये जाना जाता है। क्योंकि हमारे साहित्यकारों के द्वारा उसे पापी, अत्याचारी पर स्त्री (सीता) को हरण करने वाला, देवताओं को हराने वाला, हवन–यज्ञादि को विध्वंस करने वाला, आसुरी शक्तियों से लोगों को आतंकित करने वाला, सज्जनों, ऋषियों आदि को मारने वाला आदि दोषों से युक्त चित्रित किया जाता रहा है।

रावण का पर्याय दश शिरों वाला, बड़े–बड़े दातों वाला, भयंकर आकृति वाला दिखाया जाता है। शायद् ऐसा इसलिये है क्योंकि रामभक्त साहित्यकार रावण के उत्तम गुणों का त्याग करके केवल कुत्सित पक्ष को ही साहित्य पटल पर लाने का कार्य किये है। जो साहित्य और समाज की दृष्टि से अनुकूल नहीं है। लंकाधिपति रावण के जीवन–चरित्र, गुण दोषों आदि से सम्बन्धित प्रामाणिक ग्रन्थ केवल वाल्मीकीय रामायण है। इसमें रावण का भले ही प्रतिनायक के रूप में वर्णन किया गया हो, लेकिन उसमें ऐसे अनेक गुण है जिसके कारण वह देव, दानव, असुर, गन्धर्व, यक्ष आदि पर विजय प्राप्त करके लंका के समृद्धिशाली नगर के रूप में प्रतिष्ठित करने में सफल रहा है।

वाल्मीकीय रामायण के अनुसार राक्षस जाति की तीन शाखाएँ थी–विराद, दानव और राक्षस। सर्वप्रथम प्रजापति ब्रह्मा ने पूर्वकाल में समुद्रगत जल की सृष्टि करके उसकी रक्षा के लिये अनेक प्रकार के जल जन्तुओं को उत्पन्न किया। वे जन्तु भूख–प्यास से पीड़ित होकर 'अब हम क्या करें' ऐसी बात करते हुए अपने जन्मदाता ब्रह्मा जी के पास विनीत भाव से गये। उन सबको देखकर प्रजापति ने उन्हें वाणी द्वारा सम्बोधित करके कहा–हे जल जन्तुओं तुम यत्नपूर्वक जल की रक्षा करो–

शोधच्छात्र संस्कृत विभाग, डॉ. हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर (म.प्र.)

प्रजापतिस्तु तान् सर्वान् प्रत्याह प्रहसन्निव।
आभाष्य वाचा यत्नेन रक्षध्वमिति मानद।।[1]

वे सभी जन्तु भूखे–प्यासे थे, उनमें से कुछ ने कहा हम इस जल की रक्षा करेंगे और दूसरे ने कहा हम इसका यक्षण (पूजन) करेंगे, तब उन भूतों की सृष्टि करने वाले प्रजापति ने उनसे कहा–

रक्षाम इति यैरुक्तं राक्षसास्ते भवन्तु वः।
यक्षाम इति यैरुक्तं यक्षा एव भवन्तु वः।।[2]

अर्थात् तुममें से जिन लोगों ने रक्षा करने की बात कही है, वे राक्षस नाम से प्रसिद्ध हो और जिन्होंने यक्षण (पूजन) करना स्वीकार किया है, वे लोग यक्ष नाम से विख्यात हों। इस प्रकार वे जीव यक्ष और राक्षस इन दो जातियों में विभक्त हो गये। रावण इन्हीं रक्षा करने वाले अर्थात् राक्षसों का नायक हुआ।

लंकाधिपति रावण के नाना सुमाली बहुत बुद्धिमान् थे। उन्होंने राक्षसों की उन्नति के लिये अपनी पुत्री कैकसी को ब्राह्मण ऋषि विश्रवा के पास भेजा। तत्पश्चात् मुनि विश्रवा ने कैकसी से कहा कि मेरे संयोग से तुम्हारे जो पुत्र उत्पन्न होंगे वे क्रूर स्वभाव वाले और शरीर से भी भयंकर होंगे। तथा उनका क्रूर कर्म करने वाले राक्षसों के साथ ही प्रेम होगा। तुम क्रूरता पूर्ण कर्म करने वाले राक्षसों को ही पैदा करोगी, सुमाली असुर की पुत्री कैकसी और मुनि विश्रवा के संयोग से पहले क्रूर स्वभाव वाले रावण का जन्म हुआ–

जनयामास बीभत्सं रक्षोरूपं सुदारुणम्।।
दशग्रीवं महादंष्ट्रं नीलांजनचयोपमम्।
ताम्रोष्ठं विंशतिभुजं महास्यं दीप्तमूर्धजम्।।[3]

अर्थात् कैकसी ने कुछ काल के अनन्तर अत्यन्त भयानक और क्रूर स्वभाव वाले एक राक्षस को जन्म दिया, जिसके दस मस्तक, बड़ी–बड़ी दाढ़ें, ताँबे जैसे ओष्ठ, बीस भुजाएँ, विशाल मुख और चमकीले केश थे। उसके शरीर का रंग कोयले के पहाड़ जैसा काला था। रावण के जन्म के बाद कुम्भकर्ण शूर्पणखा और विभीषण का जन्म हुआ। यहाँ पर लंकाधिपति रावण को दस मस्तक वाला, बीस भुजाओं वाला, विशाल मुख वाला कहा गया है। ऐसा प्रतीत होता है कि वाल्मीकीय रामायण में यह श्लोक बाद में जोड़ा गया है। क्योंकि इस प्रकार के भयंकर आकृति वाले पापी राक्षस को महाराज जनक अपनी पुत्री सीता के स्वयंवर में कभी भी आमंत्रित नहीं करते। सीता स्वयंवर में श्रेष्ठ राजाओं को ही आमंत्रित किया गया था और दूसरी बात यह है कि रावण एक सिर वाला और दो भुजाओं वाला महाप्रतापी मानव ही था, जैसा कि वाल्मीकीय रामायण में हनुमान् के द्वारा लंका

में विचरण करते समय रावण के दर्शन से सिद्ध होता है। सीता को खोजते हुए हनुमान जी जब लंका पहुंचे तो रावण को पलंग पर सोते हुए देखकर कहते हैं कि–

ददर्श स कपिस्तस्य बाहू शयनसंस्थितौ।
.....पूरयन्निव तद् गृहम्।।[4]

यहाँ पर हनुमान जी ने पलंग पर सोते हुए रावण की दो भुजाएँ और सुन्दर मुँख को देखते हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि यहाँ पर रामभक्त कवियों के द्वारा यह श्लोक बाद में जोड़ा गया है या दशग्रीव आदि की अलग ढंग से व्याख्या की गयी है। वस्तुतः रावण बहुत ही शक्तिशाली राजा था, जिस कारण से वह दशग्रीव या एक ही सिर पर दस सिरों का बल रखने वाला कहलाया और दशानन का भाव है कि उसने दसो दिशाओं को जीता या दस प्रकार के मणियों को धारण किया, बीस भुजाएँ, अद्वितीय वीरता एवं अनगिनत विजय का और बीस आँखे सूक्ष्म दृष्टि, बुद्धिमानता, पाण्डित्य का प्रतीक रहा होगा।

विश्रवा ऋषि जन्म से पहले ही रावण के विषय में उसके क्रूर स्वभाव, भयंकर आकृति की भविष्य वाणी कर दी थी, जिसके कारण माता कैकसी जन्म से ही रावण से नफरत सी करने लगी थी। बाल्यकाल में ही रावण को समझाते हुए कैकसी ने कहा कि–

दशग्रीव यथा यत्नं कुरुष्वामितविक्रम।
यथा त्वमपि में पुत्र भवेर्वैश्रवणोपमः।।[5]

अर्थात् अमित पराक्रमी दशग्रीव! मेरे बेटे! तुम भी ऐसा कोई यत्न करो, जिससे वैश्रवण (कुबेर) की ही भांति तेज और वैभव से सम्पन्न हो जाओ। माता कैकसी की यह बात सुनकर प्रतापी दशग्रीव को अनुपम अमर्ष हुआ। उसने तत्काल प्रतिज्ञा की–

सत्यं ते प्रतिजानामि भ्रातृतुल्योऽधिकोऽपि वा।
भविष्याम्योजसा चैव संतापं त्यज हृद्गतम।।[6]

अर्थात् माँ तुम अपने हृदय की चिन्ता छोड़ो मैं तुमसे सच्ची प्रतिज्ञापूर्वक कहता हूँ कि अपने पराक्रम से भाई वैश्रवण के समान या उनसे भी बढ़कर हो जाऊँगा। अपनी माता से की हुई प्रतिज्ञा को पूर्ण करने के लिये रावण ने घोर तपस्या की और ब्रह्मा आदि देवताओं ने उसे विजय दिलवाने वाले वरदान दिये। कुबेर से अपने पूर्वजों की लंका को अपने अधिकार में लेने के पश्चात् लंकाधिपति रावण का यश–वैभव, दूर–दूर तक फैल गया। उसने जल्द ही अपनी वीरता से अंगद्वीप, मलयद्वीप, शंखद्वीप, अंगद्वीप आदि दक्षिणी द्वीपों को जीत लिया। उसने देव, दानव, असुर, गन्धर्व, यक्ष आदि उस समय की लगभग सभी जातियों को जीतकर अपने वश में कर लिया था। इस प्रकार लंकाधिपति रावण ने उस समय

के सबसे बड़े और शक्तिशाली राज्य की स्थापना की, इससे पहले कोई भी ऐसा नहीं कर पाया था।

लंकाधिपति रावण राजनैतिक और सांस्कृतिक रूप से भी बहुत महत्त्वपूर्ण और शक्तिशाली सम्राट था। उसने आदित्य और यक्ष जाति को मिलाकर राक्षस संस्कृति की स्थापना की। राक्षस संस्कृति का मूल मंत्र था–विश्व को एक धर्म और एक संस्कृति में दीक्षित करना। इस प्रकार वो रावण ही था जिसने सर्वप्रथम अखिल विश्व में एकता का उद्घोष किया। इस उद्देश्य से सर्वप्रथम उसने ही वेद का संपादन किया। वैदिक रचनाओं पर जीवन टिप्पणियाँ, मूल मंत्रों की व्याख्या की। रावण द्वारा प्रतिपादित यह नवीन भाष्य ही आज 'कृष्ण यजुर्वेद' के नाम से जाना जाता है। रावण के शासन काल में पूरे लंका में यज्ञ होते थे और वेद मंत्र पढ़े जाते थे–

षडंगवेदविदुषां क्रतुप्रवरयाजिनाम्।
शुश्राव ब्रह्मघोषान् स विरात्रे ब्रह्मरक्षसाम्।।[7]

अर्थात् रात के उस पिछले पहर में छहों अंगों सहित सम्पूर्ण वेदों के विद्वान् तथा श्रेष्ठ यज्ञों द्वारा यजन करने वाले ब्रह्म राक्षसों के घरों में वेदपाठ की ध्वनि होने लगी, जिसे हनुमान् जी ने सुना।

राम भक्त कहते हैं कि रावण ऋषियों को मारता था, यज्ञ नहीं करने देता था, जबकि वह तो स्वयं बहुत बड़ा याज्ञिक था, महान् पण्डित था और उसने कोई भी शुभ कार्य विना यज्ञ के नहीं किया। यहाँ तक कि उसकी प्रजा भी यज्ञ करती थी, तो भला लंकाधिपति रावण ऋषियों को क्यों मारता और उनके यज्ञ को क्यों नष्ट करता? वह ऋषियों के यज्ञ के तरीके का विरोधी था, क्योंकि उस समय ऋषियों द्वारा यज्ञ (अग्निष्टोम आदि यज्ञ) में पशु–बलि दी जाती थी जिसका रावण विरोध करता था। राम कथा रचयिताओं और राम भक्तों ने रावण को परस्त्रीगामी कहा है पर यह आरोप भी गलत है। रावण ने सभी स्त्रियों को विवाह करके ही हासिल किया था। विलासिका, मन्दोदरी, आदि रानियों ने रावण को स्वयं वरा था या उनके पिताओं ने स्वयं रावण को प्रदान किया था और सभी स्त्रियाँ अपनी इच्छा से उसके साथ सुखपूर्वक रहती थी। रावण के राजमहल को देखकर हनुमान् जी स्वयं कहते हैं कि–

न तत्र काश्चित् प्रमदाः प्रसह्य
वीर्योपपन्नेन गुणेन लब्धाः।
न चान्यकामापि न चान्यपूर्वा
विना वरार्हां जनकात्मजां तु।।[8]

अर्थात् वहाँ ऐसी कोई स्त्रियाँ नहीं थी, जिन्हें बलपराक्रम से सम्पन्न होने पर भी रावण उनकी इच्छा के विरुद्ध बलात् हर लाया हो। वे सबकी सब उसे अपने अलौकिक गुण से ही उपलब्ध हुई थी, जो श्रेष्ठतम पुरुषोत्तम श्री रामचन्द्र जी के

योग्य थी। उन जनक किशोरी सीता को छोड़कर दूसरी कोई ऐसी स्त्री वहाँ नहीं थी जो रावण के अतिरिक्त किसी दूसरे की इच्छा रखने वाली हो अथवा जिसका पहले कोई दूसरा पति रहा हो–

न चाकुलीना न च हीनरूपा
नादक्षिणा नानुपचारयुक्ता।
भार्याभवत् तस्य न हीनसत्त्वा
न चापि कान्तस्य न कामनीया।।[9]

अर्थात् रावण की कोई भार्या ऐसी नहीं थी जो उत्तम कुल में उत्पन्न न हुई हो अथवा जो कुरूप हो, अनुदार या कौशल रहित, उत्तम वस्त्राभूषण एवं माला आदि से वंचित शक्तिहीन तथा प्रियतम को अप्रिय हो। इससे स्पष्ट है कि रावण की सभी स्त्रियाँ अत्यन्त सुन्दर और पतिव्रता थी। जिसकी सुन्दरता आदि को देखकर हनुमान् जी भी आश्चर्य चकित होकर कहने लगे कि ये सभी स्त्रियाँ राम के योग्य हैं।

राम और लक्ष्मण के द्वारा बहन शूर्पणखा के साथ दुर्व्यवहार करने के कारण लंकाधिपति रावण ने देवी सीता का हरण किया था, किन्तु देवी सीता के साथ कभी–भी कुछ गलत नहीं किया। यहाँ पर भी रामभक्त रचनाकारों आदि कहते हैं कि रावण को श्राप मिला था कि किसी स्त्री की इच्छा के विरुद्ध उससे सम्पर्क करेगा तो वह भस्म हो जायेगा। इसीलिये रावण ने सीता का चरित्र पवित्र रखा था और उसके साथ दुर्व्यवहार नहीं किया था, पर ऐसी बात नहीं है, क्योंकि रावण यदि चाहता तो सीता के साथ कुछ भी कर सकता था। एक क्षण के लिये यदि यह मान ले कि श्राप के कारण सीता के चरित्र से रावण ने नहीं खेला तो क्या उसके सैनिकों, अनुचरों, भाइयों अन्य राक्षसों को भी वह श्राप था? यदि रावण सीता के चरित्र पर लांछन ही लगाना चाहता तो अपने सैनिकों, अनुचरों आदि को आदेश देकर सीता के साथ कुछ भी करवा सकता था। पर लंकाधिपति रावण ने ऐसा नहीं किया। वह स्त्रियों के प्रति अपनी मर्यादा जानता था इसीलिये सीता की देखरेख के लिये अशोक वाटिका में स्त्रियों को ही नियुक्त किया था।

वस्तुतः इतिहास उन्ही के सापेक्ष लिखा जाता है जो विजेता रहता है। यह बात राम–रावण, कौरव–पांडव सभी प्रसंगों में लागू होती है। अपने प्रिय को नायक तथा विरोधियों को प्रतिनायक के रूप में दर्शाना इतिहासकारों के लिये कोई नयी बात नहीं है। अपने चहेतों के अवगुणों तथा विरोधियों के गुणों को छिपा कर पेश किया जाता है। जिसे बाद में समझ पाना मुश्किल हो जाता है। लेकिन उस समय की परिस्थितियाँ, वातावरण तथा घटनायें छिपे रूप से वास्तविकता का अहसास करा सकती हैं। रामायण में भी ऐसा हो सकता है। इसमें रावण के अच्छे गुण छिपा

दिये गए और दुर्गुण आम चर्चा के विषय बन गए। इस जन मान्यता ने रावण को कुरूप राक्षस का दर्जा दे दिया। राक्षस शब्द का अर्थ ही बदल दिया गया। जबकि सच में रावण के ऐसा होने का प्रमाण नहीं है। अगर हम पूर्वाग्रही मानसिकता से परे, ईमानदारी से निश्पक्ष होकर विचार करें तो यह सहज ही साफ हो जाता है कि रावण भी राम की तरह ऐतिहासिक महापुरुष था। एक महान् जाति और संपन्न राष्ट्र का शासक था, प्रणेता था।

प्राचीन युद्धों के नियम होते थे। महाभारत की युद्ध नीति में कई ऐसे अवसर मिल जायेंगे, जिसमें इन नियमों का सही अनुपालन नहीं किया गया। रामायण में भी युद्ध के दाव–पेंच, तथा छल–बल का इस्तेमाल किया गया है। चाहे बालि–वध हो या मेघनाथ की मौत इसे युद्ध–नीति में शामिल किया गया। रावण की बहन के साथ बेइज्जती से पेश अया गया, तो इसके बदले रावण द्वारा सीता को बा–इज्जत लंका में रखा गया। रामदूत–अंगद की बात लंका में सुनी गयी तो रावण–दूत शुक तथा शरण को रामादल में जासूस समझकर मारने का प्रयास किया गया। बाद में राम द्वारा बीच–बचाव करने पर छोड़ा गया।

इन सभी तथ्यों को यदि ध्यान पूर्वक देखा जाय तो लंकाधिपति रावण तार्किक, महापण्डित, ज्ञानी, अपने स्वाभिमान की रक्षा के लिये किसी की अधीनता न स्वीकार करने वाला, महाबलशाली सम्राट जरूर रहा है, किन्तु उसे पापी, अत्याचारी, अधर्मी, दुराचारी या अनैतिक आदि नहीं कहा जा सकता।

संदर्भ

1. वाल्मीकीय रामायण, उत्तरकाण्ड 4/11
2. वही 4/13
3. वही 9/28–29
4. वा.रा., सुन्दरकाण्ड 10/21–24
5. वा.रा., उत्तरकाण्ड 9/43
6. वही 9/45
7. वा.रा., सुन्दरकाण्ड 18/2
8. वही 9/70
9. वही 9/71